खरतर गच्छके आचार्यों सम्बन्धी कतिपय अज्ञात ऐतिहासिक रचनाएँ

अगरचंद नाहटा
भँवरलाल नाहटा

जैन धर्मके अनेक संप्रदाय व गच्छ हैं, उनमें श्वे० जैन संघमें खरतर गच्छ और तपा गच्छ मुख्य हैं। मध्यकालमें और भी कई गच्छ बडे प्रभावशाली रहे है पर आज वे प्रायः नामशेष हो चुके हैं। खरतर गच्छका इतिहास वस्तुतः अत्यन्त गौरवपूर्ण और गत एक हजार वर्षके जैन समाजके इतिहासका एक महत्त्वपूर्ण अंग है। इसके महान ज्योतिर्धरोंने अपने विशिष्ट चारित्र के बल पर शिथिलाचारके गर्तमें गिरते हुए जैन शासनको चैत्यवासके घनान्धकारसे निकालकर उन्नतिपथारूढ बनाया। श्रीवर्द्धमान-सूरिजीसे लगाकर श्रीजिनपतिसूरिजी तकका काल इसी महान् शासन सेवासे आप्लावित है। उन्होंने जैन समाजको उच्च चारित्र-सौरभसे सुरभित किया, आगमोंकी टीकाएं बनाई, प्रकरण ग्रन्थों एवं विविध विषयक उच्च कोटिके वाङ्मयसे साहित्य-भण्डारको भरपूर किया। राजसभाओंमें शास्त्रार्थ किये, राजाओं एवं जन साधारणको प्रतिबोध देकर लाखों नये जैन बनाये, आशातनाओंको दूर करनेके लिए स्थान स्थान पर विधिचैत्य स्थापित किये और भव्यजीवोंको मोक्षमार्गमें लगाकर उनका कल्याण साधन किया। इन सब बातों पर प्रकाश डालनेवाली प्रामाणिक सामग्री ज्यों ज्यों प्रकाशमें आ रही है, उसका परिशीलन करने पर पूर्वाचार्योंकी महान शासन-सेवाओंके प्रति हृदय अटूट श्रद्धा और आनंदसे झुक जाता है।

खरतर गच्छके इतिहास पर विशिष्ट प्रकाश डालनेवाली गुर्वावली सिंघी जैन ग्रन्थमालासे व उसका अनुवाद दादा जिनदत्तसूरि अष्टम शताब्दी महोत्सव समितिकी तरफसे (खरतर गच्छका इतिहास प्रथम खंड रूपमें) प्रकाशित हो चुका है। इसमें वर्द्धमानसूरिजीसे ले कर जिनेश्वरसूरि(द्वितीय)तकका वृतान्त वादलब्धि सम्पन्न श्रीजिनपतिसूरिके शिष्य जिनपालोपाध्याय द्वारा संकलित है, जिसका पूर्वाधार गणधरसार्धशतक बृहद् वृत्ति है जो सं० १२९५में पूर्णदेवगणि कथित वृद्ध सम्प्रदायानुसार श्री सुमति गणिने बनाई है। इसमें युगप्रधान श्रीजिनदत्तसूरिजी तकका वृतान्त है। उनके पट्टधर मणिधारी जिनचंद्र-सूरिजीसे सं० १३०५ तकका वृतान्त जिनपालोपाध्यायने दिल्लीनिवासी साधु साहुलिके पुत्र साह हेमाकी प्रार्थनासे लिखा और उसके पश्चात् सं० १३९३ तक अर्थात् दादा श्रीजिनकुशलसूरिजीके पट्टधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीजिनपद्मसूरिजीके समय तकका वृतान्त तत्कालीन अन्य विद्वानों द्वारा लिखा गया था जिसकी एक मात्र प्रति श्रीक्षमाकल्याणजीके भंडारमें मिली थी, जो अत्यन्त प्रामाणिक और महत्त्वपूर्ण है। इसके बादका इतिवृत्त विभिन्न साधनसामग्रीसे संकलित हुआ जिसमें कितनीक सामग्री तत्कालीन और कितनी ही बहुत बादकी लिखी हुई पट्टावलियोंसे उपाध्याय क्षमाकल्याणजीकृत पट्टावलीके अनुवाद रूपमें उपर्युक्त इतिहासके दूसरे खंडमें दिया है जो प्रकाशित है। सं० १४३०के महाविज्ञप्ति लेखकी उपलब्धिसे बहुतसी प्रामाणिक और अज्ञात सामग्री प्रकाशमें आगई एवं कुछ पट्टाभिषेक रासादिसे उपलब्धि हो गई पर श्रीजिनलब्धिसूरिजी आदिके विषयका इतिहास अंधकारमें ही था। रास आदि ऐतिहासिक सामग्री हमने २७ वर्ष पूर्व ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रहमें प्रकाशित की थी। उसके बाद हमारी खोज निरंतर चालू है, फलतः बहुतसी महत्त्वपूर्ण ऐ० रचनाएं हमारे यहाँ संगृहीत हैं।

बीकानेर बृहद्ज्ञानभण्डारके महिमाभक्ति भंडारमें हमें लगभग ३० वर्ष पूर्व मुनि महिमाभक्ति लिखित एक सूची मिली थी जो सं० १४९० लि. जिनभद्रसूरि स्वाध्याय पुस्तिकाकी थी। इसमें प्रस्तुत प्रति अजीमगंजकी बड़ी पोसालमें होनेका यह उल्लेख था :

"सं० १४९० वर्षे मार्गसिर सुदि ७ रे लिख्योड़े पुस्तक रो बीजक सं० १९२४ रा मि।
ज्येष्ट सुदि प्रथम १३ श्री अजीमगंजे लि.। पं० महिमाभक्ति मुनिना।
या परति अजीमगंज में भंडार में छै बड़ी पोसालमें।"

इस सूचीके अनुसार हमें कई अज्ञात प्राचीन कृतियोंकी जानकारी प्राप्त हुई और वे कृतियां प्राप्त करनेके लिए श्रीपूज्यजी महाराज श्रीजिनचारित्रसूरिजी, श्री अमरचंदजी बोथरा और अंतमें श्रीपूज्यजी श्रीजिनविजयेन्द्रसूरिजीको प्रेरित करते रहे। हम स्वयंभी वहां जा कर ज्ञानभंडार देख चुके पर प्राप्त न हो सकी। इसके लिए सामयिक पत्रों व पुस्तकादिमें भी लिख कर खोजकी आवश्यकता व्यक्त की गई पर गत ३० वर्षोंमें हमारी आशा फलवती नहीं हुई। अभी कलकत्तामें जैनभवनकी ओरसे श्री बद्रीदासजीके बगीचेमें जैन इन्फोर्मेशन ब्यूरोके उद्घाटन अवसर पर आयोजित प्रदर्शनीके लिए श्री मोतीचंदजी बोथरा पांच प्रतियाँ[1] लाये और मात्र एक दिन प्रदर्शित हो कर वापस भेजनेके पूर्व लायी हुई प्रतियोंको मुझे दिखा देना उचित समझा। मुझे रातमें सूचना मिलते ही तत्काल वहां जाकर प्रतियां ले आया और मुझे उन प्रतियोंमें उस स्वाध्याय पुस्तिकाके मिल जानेका अपार हर्ष हुआ जिसे हम गत २५–३० वर्षोंसे खोज रहे थे। इस स्वाध्याय पुस्तिकामें हमें खरतर गच्छ इतिहास पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालने वाली निम्नोक्त कृतियां मिली हैं, जो अद्यावधि अप्रकाशित हैं।

१	श्रीजिनपतिसूरि सुगुरु पंचाशिका	गा० ५५
२	श्रीजिनेश्वरसूरि चतुःसप्ततिका	गा० ७४
३	श्रीजिनप्रबोधसूरि चतुःसप्ततिका	गा० ७४ उ. विवेकसमुद्र
४	श्रीजिनकुशलसूरि–चहुत्तरी	गा० ७४ श्रीतरुणप्रभाचार्य
५	श्रीजिनलब्धिसूरि–चहुत्तरी	गा० ७४ श्रीतरुणप्रभाचार्य
६	श्रीजिनलब्धिसूरि स्तूपनमस्कार	गा० ४
७	श्रीजिनलब्धिसूरि नागपुर स्तूपनमस्कार	गा० ८

१ अजीमगंजसे लाई हुई ५ प्रतियोंमें ३ प्रतियाँ कल्पसूत्रकी थी, जिनमें १ स्वर्णाक्षरी और १ रौप्याक्षरी भी है। चौथी प्रति हेमहंसकृत षडावश्यक बालावबोध और पांचवीं प्रस्तुत स्वाध्याय पुस्तिका है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन कृतियोंके साथ श्रीजिनकुशलसूरिजीकृत "श्रीजिनचंद्रसूरि चतुःसप्ततिका" गा० ७४ भी इस प्रतिमें है। यह हमें २८ वर्ष पूर्व गणिवर्य्य श्रीबुद्धिमुनिजी महाराजने लींबडीके भंडारसे नकल करके भेजी थी जिसका हमने "दादाजिनकुशलसूरि" पुस्तकके परिशिष्टमें प्रकाशन कर ही दिया था। एवं इसका सार ऐतिहासिक जैनकाव्य संग्रहमें उसी समय प्रकाशित कर दिया था।

उपर्युक्त सभी काव्य प्राकृत भाषामें और एक ही शैलीमें रचित है। श्रीजिनपतिसूरि पंचाशिका-(गा० ५५)के अतिरिक्त ५ कृतियां ७४ गाथाकी चतुः सप्ततिकाएं हैं, अन्तिम दो लघु कृतियां हैं। इनमें ऐतिहासिक वर्णन अल्प और गुणवर्णनात्मक स्तुति परक ही अधिक भाग है। फिर भी जो ऐतिहासिक तथ्य इनमें हैं, वे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और अन्यत्र अप्राप्य भी हैं। गुरु स्तुतियां भी आत्माको ऊंचा उठाने व गुरुभक्तिमें तल्लीन कर सत्पुरुषोंके प्रति पूज्यबुद्धि आने पर आत्म-विकास होनेमें अद्भुत सहायक है। उपमाओंकी छटाएं बडी ही मनोज्ञ और हृदयग्राही हैं। यहां इन सब कृतियोंका ऐतिहासिक सार दिया जा रहा है।

श्रीजिनपतिसूरि पंचाशिका

यह ५५ गाथाकी प्राकृत भाषामय रचना है। इसमें रचयिताने अपना नाम नहीं दिया है पर द्वितीय गाथाका "जिणवइणो नियं गुरुणो" वाक्यसे ज्ञात होता है कि यह रचना श्रीजिनपतिसूरिजी-के किसी शिष्यकी ही है। मरू-मण्डलके विक्रमपुर निवासी यशोवर्द्धनकी भार्या सूहवदेवी(जसमई)की कुक्षीसे सं० १२१०की मिती चैत्र वदि ८ मूल नक्षत्रमें आपका जन्म हुआ। बाल्यकालमें ही वैराग्य वासित हो कर सं० १२१८ फाल्गुन बदि १०को अतिशय ज्ञानी सुगुरु जिनचंद्रसूरिसे दीक्षित हुए। गुरुदेव-ने पहलेसे ही आपकी तीर्थाधिपत्त्वकी योग्यता ख्यालकर जिनपति नाम निश्चय कर लिया था। बागड़ देशके बब्बेरकपुरमें आपको आचार्य पदसे अलंकृत किया। आप समस्त श्रुतज्ञान स्वसमय-परसमयके पारगामी और वादीभपंचानन थे। आपने अनेकों वादियोंका दर्प्प दलन किया और शाकंभरीके राजा-(पृथ्वीराज)के समक्ष "जयपत्र" प्राप्त किया। आशापल्लीमें (शास्त्रार्थ-विजयद्वारा) संघको आनंदित किया। आप गौतमस्वामीकी भांति लब्धिसम्पन्न, स्थूलिभद्रकी भांति दृढव्रती और तीर्थप्रभावनामें वज्रस्वामीकी भांति थे। आप वास्तविक अर्थोंमें युगप्रधान पुरुष थे। सं० १२२३ कार्तिक शुदि १३को आपको आचार्य पद मिला था।

श्रीजिनेश्वरसूरि (चतुः) सप्ततिका

यह ७४ गाथाकी प्राकृत रचना है। इसमें भी रचयिताका नाम नहीं है। आपका जन्म मरुकोट निवासी भांडागारिक नेमिचंद्रके यहां सं० १२४५ मिती मार्गशीर्ष शुक्ला ११को लखमिणि माताकी कुक्षी-से हुआ। आपका जन्मनाम आंबड़ था। सं० १२५८में खेड़पुरमें श्रीशांतिनाथ स्वामीकी प्रतिष्ठाके अवसर पर श्रीजिनपतिसूरिजीने आपको दीक्षितकर वीरप्रभ नाम रखा। लक्षण, प्रमाण और शास्त्र सिद्धान्त-के पारगामी होकर मारवाड़, गूजरात, वागड़ देशमें विचरण किया। सं० १२७८ माघ सुदि ६के दिन जावालिपुर–स्वर्णगिरिमें आचार्य श्रीसर्वदेवसूरिजीने इन्हें श्रीजिनपतिसूरिजीके पट्ट पर स्थापितकर जिनेश्वरसूरि नाम रखा।

यह पट्टाभिषेक भगवान महावीर स्वामीके मंदिरमें हुआ था। आपने १४ वर्षकी लघुवयमें दीक्षा ली और ३४वें वर्षमें गच्छाधिपति बने। आपने शत्रुंजय, गिरनार, स्थंभन महातीर्थ आदि तीर्थोंकी यात्रा की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीजिनप्रबोधसूरि (चतुः) सप्तिका।

यह रचना भी ७४ प्राकृत गाथाओंमें है। इसके रचयिता विवेकसमुद्र गणि है। ओसवाल साहू खींवड़के पुत्र श्रीचंद और उनकी पत्नी सिरियादेवीके कुलमें चंद्रमाके सदृश आप थे। आपका जन्म गुजरातके थारापद्र नगरमें सं० १२८५के मिती श्रावण सुदि ४के दिन पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें हुआ, आपका जन्मनाम मोहन रखा गया। सं० १२९६ मिती फाल्गुन वदि ५के दिन श्रीजिनेश्वरसूरिजी महाराजने आपको पाल्हनपुरमें दीक्षित किया। गुरुमहाराजने आपका नाम प्रबोधमूर्ति रखा जो कि स्वसमय-परसमय ज्ञाता होनेसे सार्थक हो गया। सं० १३३१के मिती आश्विन कृष्ण ५के दिन स्वयं श्रीजिनेश्वरसूरिने उन्हें अपने पट्ट पर विराजमान किया। उनके स्वर्गवासके पश्चात् श्रीजिनरत्नसूरिजीने दशों दिशाओंसे आये हुए चतुर्विध संघके समक्ष सं० १३३१ मिती फाल्गुन कृष्ण ८के दिन जावालिपुरमें नाना उत्सव-महोत्सवपूर्वक श्रीजिनप्रबोधसूरिका पट्टाभिषेक किया। आपने वृत्ति-पंजिका सहित दुर्ग-पद-प्रबोध नामक ग्रंथत्रयकी रचना की। आप बड़े भारी विद्वान, प्रभावक और गच्छभार धुरा धुरंधर हुए।

श्रीजिनकुशलसूरि-चहुत्तरी

यह प्राकृत रचना श्रीतरुणप्रभाचार्य द्वारा ७४ गाथाओंमें रचित है। इनमें सर्वप्रथम कल्पवृक्षके सदृश गुरुवर श्रीजिनचंद्रसूरि और भगवान पार्श्वनाथको नमस्कार करके युगप्रधान, अतिशयधारी सद्गुरु श्रीजिनकुशलसूरिजीका गुणवर्णन करनेका संकल्प करते हुए तरुणप्रभाचार्य महाराज कहते हैं कि मारवाडके समियाणा नगरमें मंत्रीश्वर देवराजके पुत्र जिल्हा नामक थे। वे धर्मात्मा थे, उनकी बुद्धि अर्थ और कामके वनिस्पत धर्मध्यानमें विशेष गतिशील थी। उसकी शीलवती स्त्रीका नाम जयतश्री था जिसकी कुक्षीसे वि० सं० १३३७के मिती मार्गशीर्ष वदि ३ सोमवारके दिन शुभवेलामें चंद्रमादि उच्चस्थान स्थिति समयमें पुनर्वसु नक्षत्रमें आपका जन्म हुआ। शुभ कर्म साधनामें सकर्म, लघुकर्मी होनेसे आपका नाम कर्मणकुमार रखा गया। सं० १३४६ मिती फाल्गुन सुदि ८के दिन समियाणाके श्रीशांति जिनप्रासादमें श्रीजिनचंद्रसूरिजीके करकमलोंसे आपकी दीक्षा हुई। महोपाध्याय श्रीविवेकसमुद्र गणिकी चरण सेवामें रहकर आपने विद्याध्ययन किया और विद्यारूपी स्वर्णपुरुषकी सिद्धि की। उस स्वर्णपुरुषके दो व्याकरण रूपी दो चरण, छंद-जानु, काव्यालंकार उरुसंधि, नाटक रूपी कटिमंडल, गणित नाभि संवर्त्त, ज्योतिष-निमित्त गर्त्त, धर्म-शास्त्र रूपी हृदय, मूलश्रुतस्कंध बाहु, छेदसूत्र हाथ, छतर्क उत्तमांग आदि अंगोपांग थे। गुणश्रेणी रूपी शिव-निसेणी पर आरूढ होकर मिथ्यात्व पटको देशना शक्तिसे फाड़ डाला। उच्च चारित्रके प्रभावसे कषायोंको उपशांत किया, ब्रह्मचर्य रूपी तीरसे कामसेनापतिका हनन कर डाला। अध्यवसान चक्रधारासे मोहराजको निहतकर जयजयकार कीर्तिपताका दशोदिशिमें प्रसारित की।

गुरुवर्य श्रीजिनचंद्रसूरिजीने चरित्रनायककी योग्यतासे प्रभावित होकर सं० १३७५ मिती माघ सुदि १२के दिन नागपुरके जिनालयमें बड़े भारी संघके मेलेमें चरित्रनायकको वाचनाचार्य पदसे अलंकृत किया। तत्पश्चात् विक्रम सं० १३७७ मिती ज्येष्ठ कृष्णा ११ गुरुवारको गुरुनिर्देशानुसार पाटण नगरके श्रीशांतिनाथ जिनालयमें आचार्य श्रीराजेन्द्रचन्द्रसूरिने युगप्रधान श्रीजिनचंद्रसूरिजीके पट्ट पर इनको स्थापित करके जिनकुशलसूरि नाम प्रसिद्ध किया। इन्होंने महातीर्थ शत्रुञ्जयके शिखर पर मानतुंग प्रासादमें ऋषभदेव स्वामीकी प्रतिष्ठा की। शत्रुजय, अणहिलपुर, जालोर, देरावर आदि अनेक स्थानोंमें जिनबिम्बोंकी स्थापना की। जेसलमेरमें मूलनायककी स्थापना की।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीमाल सेठ रयपतिके संघ सहित शत्रुंजय आदि तीर्थोंकी यात्राकी। फिर ओसवाल वंश शुक्ति मौक्तिक साहु वीरदेवके साथ भी शत्रुंजयादिकी वंदना की। गूर्जर, मारवाड़, सिंध, सवालक्षादि देशोंमें विचरकर दीक्षा, मालारोपण, श्रावक व्रतारोपण आदि द्वारा स्थान स्थानमें धर्मकी प्रभावना की। वे सर्व विद्याओंके ज्ञाता थे, स्याद्वाद, न्यायशास्त्रादि दो वार शिष्योंका भणाये। चैत्यवन्दन कुळक वृत्ति, आदि सरस कथानक परोपकारार्थ रचे। विद्या विनोद, कविता विनोद और भाषा विनोद सतत चालू रहता था। गुरुदेवके एक एक उपकारका वर्णन हजारों जिह्वाओं द्वारा भी नहीं किया जा सकता। अन्तमें गुरुदेव श्रीजिनकुशलसूरिजीने अपना आयुशेष ज्ञातकर श्रीतरुणप्रभसूरिको अपने पट्ट पर पद्ममूर्ति नामक शिष्यको अभिषिक्त करनेका आदेश देते हुए उनका नाम जिनपद्मसूरि रखा जाना निर्दिष्ट किया। आपने अनशन आराधनापूर्वक नवकार मंत्रका ध्यान करते हुए मिथ्यादुष्कृत देते हुए संलेखना सहित सं० १३८९ मिती फाल्गुन वदि ६को देरावरमें स्वर्ग प्राप्त हुए। वहां नंदीश्वर, महाविदेह आदि में तीर्थङ्करों–जिनवंदनादि सत्कार्योंमें अपना काल निर्गमन करते हैं। इस प्रकार युगप्रवर श्रीजिनकुशलसूरिकी तरुणप्रभाचार्यने भावपूर्वक स्तुति की।

श्रीजिनलब्धिसूरि–चहुत्तरी

प्रस्तुत प्राकृत भाषाके ७४ गाथा वाले सुन्दर काव्यका निर्माण श्रीतरुणप्रभाचार्यने ही किया है। इन सब काव्योंमें इसका महत्त्व सर्वाधिक है क्योंकि आचार्य श्रीजिनलब्धिसूरिजीके सम्बन्धमें अद्यावधि कोई प्रामाणिक सामग्री प्राप्त नहीं थी। प्राचीन प्रमाणोंके अभावमें पिछली पट्टावलियोंमें बहुत ही संक्षिप्त और अस्तव्यस्त जीवनी संकलित है। इस प्रामाणिक चहुत्तरीका सार यहाँ दिया जा रहा है जो खरतर गच्छ इतिहासकी शृंखलाको जोड़ने वाली सिद्ध होगी।

आचार्य श्रीजिनचंद्रसूरिको नमस्कार करके उन्हींके शिष्य श्रीजिनलब्धिसूरिकी स्तवना श्रीतरुण-प्रभाचार्यजी प्रारंभ करते हैं। जहां हाट और घरों पर कपाट नहीं बंद किये जाते ऐसे चोरीचकारी रहित माड देशमें जेसलमेर महादुर्ग है। वहां यादव वंशी राजा जयतसिंह राज्य करता है। दर्शन करनेसे शास्वत जिन चैत्योंका ख्याल कराने वाला पार्श्वनाथ जिनालय बिंवरत्न विराजित और स्वर्ण कलशयुक्त है। ओसवाल वंशकी नवलखा शाखामें धणसीह श्रावक हुए जिनकी भार्यारत्न खेताहीकी कूक्षिसे सं० १३६० मार्गशिर शुक्ला १२के दिन साचौरमें लक्खणसी'हका जन्म हुआ। अणहिलपुरमें विचरते हुए श्रीजिनचन्द्र-सूरिका उपदेशामृत पान कर सं० १३७० मिती माघ शुक्ला ११को दीक्षित हुए। आपका दीक्षा नाम लब्धि-निधान रखा गया। श्रीमुनिचंद्र गणिके पास स्वाध्याय, आलापक, पंजिका, काव्यादि तथा श्रीराजेन्द्र-चन्द्राचार्यके निकट नाटक, अलंकार, व्याकरण, धर्म प्रकरण, प्रमाणशास्त्रादिका अध्ययन कर मूळागमोंका अध्ययन किया। दमयन्ती कथा, काव्यकुसुम माला, वासवदत्ता, कम्मपयड़ी आदि शास्त्र पढ़े। श्रीजिनकुशलसूरिजीके पास महातर्क खण्डनादि तथा हमारे (तरुणप्रभाचार्य) साथ विषम ग्रंथोंका अभ्यास किया। इनके क्षांति, दान्त, आदि गुणोंकी कान्तिको देख कर वचन कलादिसे मुग्ध हो कर सब लोग सिर धुनते हुए आश्चर्य प्रगट करते थे।

सं० १३८८ मिती मार्गशीर्ष शुक्ला ११के दिन देरावरमें श्रीजिनकुशलसूरिजी महाराजने हमें (तरुणप्रभ) सूरिपद और इन्हें (लब्धिनिधानजीको) उपाध्याय पदसे अलंकृत किया।[1] प्रथम भुवनहितो-

१ देखिये युगप्रधानाचार्य गुर्वावली। सं० १३८९ के देवराजपुर (देरावर) चातुर्मास में श्रीजिनकुशलसूरिजी ने लब्धिनिधानोपाध्याय को स्याद्वादरत्नाकर, महातर्क रत्नाकरादि ग्रंथों का परिशीलन करवाया था। दे० हमारे लिखित दादाजिनकुशलसूरि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाध्यायको पढाया एवं जिनपद्मसूरि, विनयप्रभ, सोमप्रभको प्रमाण, आगमादि विद्याओंका अभ्यास कराया। सं० १४००के मिती आषाढ मासकी प्रथम प्रतिपदाको पाटणके श्रीशांतिनाथ जिनालयमें हमने (तरुणप्रभाचार्य) श्रीजिनपद्मसूरिजीके पट्ट पर आचार्य पदाधिष्ठित किया और श्रीजिनलब्धिसूरि नाम प्रसिद्ध किया। इन्होंने गुजरात, मारवाड़, सवालक्ष, लाट, माड, सिन्धु, सोरठ आदि देशोंमें विचर कर स्थान स्थान पर महोत्सवादि द्वारा शासन प्रभावना की। चारों दिशाओंमें शासन भवनके निमित्त चार पद बनाये। तीन उपाध्याय, चार वाचनाचार्य, ८ शिष्य साधु और दो आर्याएं की। अपने प्रगटित गुण महात्म्यसे राय वणवीर, मालग प्रमुखादिसे पदसेवा कराई। इस प्रकार अतिशयवान आचार्य महाराजने अपना आयुशेष जान कर अपने पट्टयोग्य शिक्षा दे कर सं० १४०४ मिति आश्विन शुक्ला १२के दिन नागौरमें समाधिपूर्वक स्वर्गवासी हुए। श्रीसंघने उनके स्मारक स्तूपका निर्माण बड़े प्रशस्त रूपसे करवाया। यह श्रीजिनलब्धिसूरिकी स्तवना उनके सतीर्थ्य श्रीतरुणप्रभसूरिने की।

श्रीजिनलब्धिसूरि स्तूप नमस्कार (गा० ४) और श्रीजिनलब्धिसूरि नागपुर स्तूप स्तवन (गा० ८) नामक दोनों कृतियोंमें माता-पिताके नाम जन्म, दीक्षा, उपाध्याय, आचार्य पद व स्वर्गवासकी उपर लिखी बातें ही संक्षिप्त वर्णित है।

खरतर युगप्रधानाचार्य गुर्वावलीमें सं० १३९०में जिनपद्मसूरिकी पदस्थापनके समय इनको महोपाध्याय बतलाया है। सं० १३९३के शत्रुंजय संघमें भी आप थे। त्रिश्रृंगममें राजा रामदेवकी राज सभामें विद्वत्ता द्वारा सन्मान प्राप्त किया। जिनकुशलसूरिके चैत्यवंदन कुलकवृत्ति पर आपने टिप्पण लिखा था व १ शांतिस्तवन, २ वीतराग विज्ञप्तिका, ३-४-५ पार्श्व स्तवन, ६ प्रशस्ति आदि आपकी रचनाएँ भी प्राप्त हैं।

प्रति परिचय

जिस श्रीजिनभद्रसूरि स्वाध्याय पुस्तिकासे इन सब महत्त्वपूर्ण कृतियोंकी उपलब्धि हुई वह प्रति एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण संग्रह पुस्तिका हैं। जिसमें आगमसूत्र, प्रकरण, स्तोत्र स्तवन आदि सभी विषयके उपयोगी ग्रंथोंका संग्रह है। श्रीजिनभद्रसूरिजी महाराज एक महाप्रभावक और सुप्रसिद्ध आचार्य हुए हैं जिन्होंने जैसलमेर, खंभात, पाटण, जालोर, नागौर आदि सात स्थानोंमें ज्ञानभण्डार स्थापित किये थे और अनेक तीर्थ-मन्दिरोंकी प्रतिष्ठाएँ आदि कराई थीं। विशेष जाननेके लिए विज्ञप्तित्रिवेणी, खरतर गच्छ पट्टावली आदि ग्रंथ देखने चाहिए। यह स्वाध्याय पुस्तिका आपके ही द्वारा संकलित है, इसकी पुष्पिका इस प्रकार है :

"संवत् १४९० वर्षे। मार्गशिर सुदि ७ गुरौ दिने शतभिषा नक्षत्रे हरषण योगे श्रीविधिमार्गीय सुगुरु श्रीजिनराजसूरि दीक्षितेन परम भट्टारक प्रभुश्री मज्जिनभद्रसूरि आत्मनमवबोधनार्थं श्रीसज्झाय पुस्तिका संपूर्णा जाता॥ छ॥ साधु साध्वी श्रावक श्राविकाणां कल्याणमस्तु॥ लेखकपाठकयोः भद्रंभवतुः॥ १ प० पद्मसिंह पुत्रिकया रजाई श्राविकया श्रीस्वाध्याय पुस्तिका लेखिता॥ (भिन्नाक्षरे)"

यह प्रति १४४ पत्रोंकी हैं। एक एक पृष्ठमें १९से २१ तक पंक्तियां और प्रत्येक पंक्तिमें ७०से ७४ तक अक्षर हैं, कहीं कहीं पर्याय भी लिखे हुए है। इस प्रकार यह महत्त्वपूर्ण स्वाध्याय पुस्तिका लगभग तेरह हजार श्लोक जितनी सामग्रीसे परिपूर्ण है। अक्षर सुन्दर बारीक होते हुए कागज पतले हैं और दीमकों द्वारा एक किनारेके हिस्सेको सछिद्र व नष्ट कर दिया है।

उपरोक्त प्रतिमें प्राप्त ऐ० रचनाओंमें सबसे महत्वकी जिनलब्धिसूरि सम्बंधी चहुतरी व स्तूप नमस्कार संज्ञक है क्योंकि जिनलब्धिसूरिसम्बधी अभी तक जो बाते अज्ञात थी वे इन्हींके द्वारा प्रकाशमें आती है इसलिए इन रचनाओंको आगे दिया जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीतरुणप्रभसूरिकृत

श्रीजिनलब्धिसूरि–चहुत्तरी

सिरि मुणिवइ जिणचंदं भविकवल विलासयं सरेऊण
सिरि जिणलद्धि रिसीसं तस्स सुसीसं थुणामि अहं ॥ १ ॥

वियडे़ नायकवाडे़ नगोव एगोवए जणोवाडे़
हट्टेघरेकवाडे जत्थ न दत्ते तहिं माडे ॥ २ ॥

देसे दुग्ग निवेसे सिरि जेसलमेरु पुरवरे आसि ।
राया जायव वंसे नवो निसीहो जयतसीहो ॥ ३ ॥

सिरि पासनाह भवणं भुवणत्तय कणय भूसणं तत्थ
जिण बिंब रयण सोहं सदंड कल हूय कल कलसं ॥ ४ ॥

दिट्ठंमि जम्मि दिट्ठा सासय जिण भवण वन्निया सक्खा
जं तस्सेगग रूवग सरूवसु निरूवणं नासि ॥ ५ ॥

ऊएस वंस रुक्खे बलक्ख नवलक्ख साहपरिणाहे
अच्चब्भुय महिरूढो धणसीहो सावओ रूढो ॥ ६ ॥

खेताहीथी रयणं धीरयणंजीए सील कंति जुयं
सयलासा मुपयासं सुपया संतोसयं जायं ॥ ७ ॥

अन्न दिणे सा जाया संजाया तस्स साहुसुयगब्भा
आवंडु गंडथलया वर वसु गब्भाव सुमइच्चं ॥ ८ ॥

सा सुयणू सासुयणू संसूयणू तप्पभावओ हूया
सुह सुमणा सुह सुमणा सुह समणो सेवणा निरया ॥ ९ ॥

सुंन्न रसा[६]नल[३] ससंहर[१] विक्कम नरनाह विरिस मग्गसिरि
सुद्ध दुवालस दिवसे उववन्नो तेसि वर पुत्तो ॥ १० ॥

सच्चउरे वर नयरे जम्मो जस्सेह माय ताय हरे ।
तेणं अणुहारेणं सो जाओ माय भाय सुहो ॥ ११ ॥

भरणी गए ससंके सुह गहसंगे कुरंग वइ लग्गे
लक्खणवंतो पुत्तो लक्खणसीहो कओ तेहिं ॥ १२ ॥

आरुग्ग भग्ग सोहग्ग कंति मुह सुगुण वग्ग संसग्गा
बालत्तणेवि माया पियराणं नयण घण सारे ॥ १३ ॥

भवसायर बोहित्था अवहित्था नाण दंसणगुणोसु
अणहिलपुरम्मि पत्ता विहरंता सूरि जिणचंदा ॥ १४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुहचंद चंदिमाए तेसिं सो देसणाए पाणेणं
संतित्तो संजाओ अविवासो विसयविससलिलो ॥ १५ ॥

तेरह सत्तरि वरिसे माहम्मि वलक्खि गारसी दिवसे।
सिरि पट्टणंमि दिक्खा जिणचंद गुरुक्कमे तस्स ॥ १६ ॥

सज्झाय पाठकालावग पंजिय कव्व भणण मेएणं
मुणिचंदगणि समीपे लद्धिनिहाणेण परि रइयं ॥ १७ ॥

राईदचंद नामगसूरि सयासंमि तेण मन्हेहिं
नाडग विज्जावि जाणंदालंकार वागरणा ॥ १८ ॥

भणिया धम्म पयरण गणिया पमोणाणि सप्पमाणाणि
मूलागमामहत्था कुलाइं सुकुलाइं गहियाइं ॥ १९ ॥

निय बुद्धि कुसग्गेणं जेणाणेगंत जयपडागाए
गुरु गिरि रयण गुहाए महत्थ रयणाणि कडित्ता ॥ २० ॥

गुण गण गण रयण वण वीहीए ठाविऊण सयलाणि
बुह बहु बुद्धि धणाणं सुमुणि जणाणं पयत्ताणि ॥ २१ ॥

दमयंती ए कहाए विसमाए कव्व कुसुममाला ए
वासवदत्त कहाए सयंवराए ठियं तस्स ॥ २२ ॥

कम्मप्पयडी पयड़ी कियाइ गहणत्थ गहण तन्हा ए।
जस्स न मूढा गूढा अइपूढा बुद्धि पट मूढा ॥ २३ ॥

सिरिजिणकुसल सयासे नाय महातक्क खंडण सुतक्का
सियवाय संवराय रवि सिट्ठ परिसिट्ठ तक्काय ॥ २४ ॥

अम्हेहि समं भणिया अजभणिया भाणिया विसम गंथा
जेणंधिहण गुणेणं अच्छरियं आयरंतेण ॥ २५ ॥

खंति गुणं दंति गुणं कंतिगुणं जस्स सूरिणोकेय।
धूणं धूणं सिरसं वन्नंति नराय ठाणेसु ॥ २६ ॥

वयण कला वयण कला वयण कला जम्म जस्स सरिस वन्नकला
सवण सुहा सवण सुहा सवण सुहातेण जह संखं ॥ २७ ॥

मण वयण तणु वित्तीओ जंहूया तस्स वस्स वित्तीओ
तत्तोचुज्जं चुज्जं जं सो तासिं वसेन ठिओ ॥ २८ ॥

वसु[८] वसु[८] सिहि[३] ससि[१] वरिसे मग्गसिरे सुद्धि गारसी दिवसे
सुद्धविहि धम्म नरवर मूलपुरे देवरायपुरे ॥ २९ ॥

जिणकुसलसूरिसुहगुरू सुहत्थ कमलेण संघ समवाए
अम्हाणं सूरिपय उवज्झाय पयं ठियं तस्स ॥ ३० ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढमं चिय भुवणहिओ उवज्झाओ पाढिओ सयल विज्ज
अह जिणपउम मुणिंदो विणयपहो सोमकित्तीय ॥ ३१ ॥

गणि सोमपभो किंवी विसम पमाणागमाइ विज्जाओ
जाणाविऊय जेहिं विबोहिओ तेहिं कोनहि वा ॥ ३२ ॥

खं खं वेयँ चंद वरिसे आसाढे पढम पडिवइदिणेय
सियवारे सुहलग्गे सिरिसंति जिणेसर विहारे ॥ ३३ ॥

जिणपउमसूरि पट्टे समग्गगुण जोग संगओ विहिओ
अम्हेहिं गणनाहो सिरि जिणलद्धित्ति नामेण ॥ ३४ ॥

रयणायरोय विहुणा रविणा पओमायरो जहा सययं
जेहिं समुग्गएहिं तह विहि संघो समुल्लसिओ ॥ ३५ ॥

उड्ढं कोसुंभ झया दिसि भत्ति सु कुंकुमत्थ वयहत्था
भू कुंकुमरस सेया जेसि पयावस्स पसरेणं ॥ ३६ ॥

कित्ति कुसुमाण वुट्ठी आसीस मिसेण सुयण संतुट्ठी
मिच्छत्तरुई रुट्ठी उट्ठी दिट्ठी न केणावि ॥ ३७ ॥

सन्नाण रयण दीवो जेसिं विहि संघ मंगल पईवो ।
वय सिरिकर परिगहिओ तिकाल विसए परिप्पुरिओ ॥ ३८ ॥

काए कन्ने किचैकाविजुइकावि सुस्सईय सई
कावि सोहग्ग लच्छी जेसिं गच्छाहिवच्च पए ॥ ३९ ॥

सिरिवीर तित्थ मूहे गुरु भारा धारा भारवट्टाभो
अहवा दढयर थंभा गण पीढ परिट्ठिया जेहु ॥ ४० ॥

सुह सिहरिणि जस्स सिरे सद्द स्युइ मिहुण धम्ममिहुण कए
उहओ किरहिंडोला कन्नलयाओ किया विहिणा ॥ ४१ ॥

पुन्न परमाणु घडिया जे सुमुहं संमुहं सुभवियाणं
नयणाण मवि जिणाणुग सुहोह वुट्ठिव तुट्ठियरं ॥ ४२ ॥

नासा दंडस्सुवरि भाल यव वारणस्सकिं हिट्ठा
मणि मउराथिणि पउरा जं नयणा संभुणा रइया ॥ ४३ ॥

हंतुं तु राग दोसे कय तिहुयण कय सुगुण संपयासो
सा विहिणा विहिया जेसिं सुपयंडा जाणु भुय दंडा ॥ ४४ ॥

भुय तोडखंधकुंभा कुंभासिय नाणहत्थिमल्लस्स
मुणिवइ पुर मुह पासे मंगलकलसा किया विहिणा ॥ ४५ ॥

दट्ठूणसो वरिट्ठा सुयसारसमुद्दरं उरं गुरुयं
ईसालुयव्व मज्झं सुकिसंतेसिं न पयड्ढीए ॥ ४६ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हत्थ तला पायतला लच्छीहर दल दलेहि निम्मविया
किं जे सुपयावद्दणा लच्छी जंते सु संकमिया ॥ ४७ ॥

जेसिं नह मुत्तीओ सुह सुत्तीओ रसुब्भव महीओ।
अंग समुद्द सुतीरे केहिं न दिट्ठा स दिट्ठीहिं ॥ ४८ ॥

खंडं पय रय खंडं सुसक्करं पाय कक्करूक्करयं
दक्खं निंबह लक्खं...हुगुड़गुड़ियं च कडु गुडियं ॥ ४९ ॥

खीरं मरूसखीरं पीऊस रसं कमंबु भरवि रसं
मन्नंतेहिं केहिं जेसिं वाणी न संथुणिया ॥ ५० ॥

उज्जुय विजय विहारो जेसिं सक्का असजा थयराया।
उत्तरगुण पयडीओ चडिया नियं विसय ठाणेसु ॥ ५१ ॥

मुणि कलहा गुडगुडिया संजुडिया सारसीलरहसहस्सा।
तरवरियाय सुहासा वक्कक्करा...कपायक्का ॥ ५२ ॥

दिट्ठिविसए न मोहो नय कोहो नेव ओब्भडो लोहो।
नय काम जोह छोहो जहि विसेहोदए चरिओ ॥ ५३ ॥

जेसिं वयबल पभारप विवेय विनय सुहड भड़वाए
अन्नाणं अन्नाणं भंगाणं पहदिणं पत्तं ॥ ५४ ॥

पइ गामं पइ नगरं विहिया विहिणा महूसवा परमा।
सत्थी काओयसंघो ग्गुण विहवेणं भरेऊण ॥ ५५ ॥

वाणि गुणो कव्व गुणो वखाण गुणोय जेसिमसरिच्छो
केसिं विबुहाण मणे न च्छेरय कारओ जाओ ॥ ५६ ॥

सिरि गुज्जरत्त देसे मारव देसे सवायलक्खे य
लाडे माडे देसे सिंधु सुरट्ठाइ विसएसु ॥ ५७ ॥

वज्जंते तूर रवे गज्जंते चारु भट्ट थट्टेय
जेसिं विहार विसए कित्ती जाया भुवण भूसा ॥ ५८ ॥

परवाइ चक्कवालं विज्जा गुण गव्व पव्वयारूढं
सं नमिऊणं जेसिं लग्गं पाएसु धूलिव्व ॥ ५९ ॥

अट्ठण्हं गाऊणं सया समाराहणं कियं जेसिं
संतो मुहत्त वंता अह अहियं हुंति गुणवंता ॥ ६० ॥

चउ दिसि सासण भुवण करणत्थं चउपयाणि रइयाणि।
उवझाय तियं चउथं वाणारिय पय महायरियं ॥ ६१ ॥

विणया णमंत सीसा अडसीसा जेसि लद्ध आसीसा
संजम गुण रासीसा परिचत्त कसायकासीसा ॥ ६२ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन्हिं दूसम समए साहूणं साहु धम्म धुरजुग्गे
संखित्ते वर खित्ते अज्जा दो चेव जेहिं कया ॥ ६३ ॥

निय गुण माहप्पेणं अणन्न सरिसेण पुहवि पयडेणं।
राय वणवीर मालग पमुह पय सेव कारविया ॥ ६४ ॥

मुत्ती ससंक मुत्ती रत्ति दीहं कला पयासिंती
जेसिं विगय कलंका विम्हयया कस्स नो जाया ॥ ६५ ॥

विज्जा मंता तंता जग्गी कंता समागया संता
कलिकाले निरतिसए साहसयत्तं सया पत्ता ॥ ६६ ॥

अट्ट दुहट्ट विओगो धम्म ज्झाणे निओग संजोगे।
अणुओगे समिओगो जेसिं महो कोविसण जोगो ॥ ६७ ॥

जिणवर समयारामे नाणामिय केलि लालसमणेहिं
पसम गएहिं जेहिं न जाणियं काल परि गलणं ॥ ६८ ॥

सविसेस नाण झाणा नियजीविय मंतगं च जाणित्ता
सग पट्ट सिक्ख सिक्खा दत्ता जेहिं सहत्थेणं ॥ ६९ ॥

वेयँबरँ वेदँ सुहाँकर वच्छर अस्सिणस्स सिय पक्खे
बारसि दिवसे सग्गं पत्ता सुसमाहिणा जेय ॥ ७० ॥

नागपुरे पुरि तेसिं सुपसत्थं थूभ मुद्धरं तित्थं
संघेणं कारवियं भवियाण मनोरमत्थ करं ॥ ७१ ॥

रज्जं राएण विणा विणा पयावेण नो खमोराया
पुन्नेण विणु पयावो तह तेहि विणाय चंद कुलं ॥ ७२ ॥

अज्जवि सुरहइ भुवणं जेसिं जस कुसुम सेहरो सुरही
कप्पूर पूर सरिसो भवि महुयर हरिस रस वरसो ॥ ७३ ॥

इय जिणलद्धी थुणिओ तरुणप्पह सूरिणा सतित्थेणं
ललिय सिरी परिकलियं विहि संघे मंगलं देउ ॥ ७४ ॥

॥ इति भट्टारक श्री जिनलब्धिसूरिपादानां चहुत्तरी समाप्ता ॥

श्रीजिनलब्धिसूरिस्तूप नमस्कार

जा सूरि राउ नवलक्ख कुले पसूओ, सच्चंदगच्छ विहि संघ पयास भूओ
अप्पुव्व अब्भुय पभूय गुणाभिरामो, सो मे करेओ जिणलद्धि गुरू पसायं ॥ १ ॥

जुगवर जिणचंदस्सूरि सीसावयंसा, जिणपउम गुरूणं पट्ट उज्जोयकरा
गुरुसिरि जिणलद्धिस्सूरि राया, सया ते मम सयल समिद्धिं सप्पसन्नाकुणंतु ॥ २ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जे जायावर सच्चओर नगरे जे पट्टणे दिक्खिया
सूवज्झाय पया पुरा मुणिवरा जे देवराएपुरे
सूरिंदा पुण पट्टणे पुरवरे नागाभिहाणे दिवं
पत्ता ते जिणलद्धिसूरि पवरा हुंतुप्पसन्ना मम ॥ ३ ॥

किं नाणं वर दंसणं किमहवा किं चारुचारित्तयं
किं खंती किमु धीरिमाइ सुगुणा विन्निज्जए जस्सओ
इक्किक्कं खलु निम्मलं निरुवमं किं किं तओ वन्नए
ते पुज्जा जिणलद्धि सूरि गुरुणो निच्चं पसीयंतु मे ॥ ४ ॥

॥ इतिश्रीजिनलब्धिसूरि पादानां स्तूपनमस्काराः ॥

श्रीजिण लद्धिगुरूणं निय मइरंजिय सुरासुर गुरुणं
विलसंत परम पउमं थुणेमि थूभंमि पय पउमं ॥ १ ॥

सो धणसिंहो सा धन्न भउणला जाहिं सच्चपुर नगरे
तेरसय सट्ठिवरिसे मग्गसिरेकिर पसूओ सि ॥ २ ॥

जिणचंदसूरिहत्थेण तेरसय सत्तरीइ तहिं माए
पत्तं चरित्त रयणं तेण महग्घासि पुज्जोसि ॥ ३ ॥

सिरि जिणकुसल गुरूहिं विज्जा पारंगयस्स तुह पुव्वं
तेरह अट्ठासीए दत्त मुवज्झाय पयमुचियं ॥ ४ ॥

पट्टण पुरेय विक्कम चउद्दहसयवच्छरंति आसाढे
सिरि जिणपउम गुरूणं पट्टे भयवं तमुपविट्ठो ॥ ५ ॥

तुह पुन्नसिरिं दट्ठुं के के नहु विम्हिया हवंतिगुरो
तुम्हारिसाण अहवा सूरीण सुहं हवइ सव्वं ॥ ६ ॥

तुह बहु लोहो जं पय रिद्धिए दिव्वरिद्धि उवरिमणो
चउदहचउत्तरं ते दिवं गओ नागपुरओतं ॥ ७ ॥

एवं तुह सिरि जिणलद्धिसूरिपाया ठिया थुया थूभे
निच्चं महापसायं कुणंतु विहि सयल संघस्स ॥ ८ ॥

॥ इतिश्री जिनलब्धिसूरि पादपद्मानां नागपुरस्थित स्तूपस्य स्तवनं समाप्तं ॥

शुभ संवत् २०२१ मिते वैशाख शुक्ल ३ अक्षयतृतीया गुरुवासरे श्रीकलिकत्ता महानगर्यां अजीमगंजस्थित सं० १४९० लिखित श्रीजिनभद्रसूरि स्वाध्याय पुस्तिकात् लिपिकृतम् नाहटा भंवरलालेन ॥ शुभंभवतु ॥ कल्याणमस्तु ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org